

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 12: सृष्टि का विस्तार

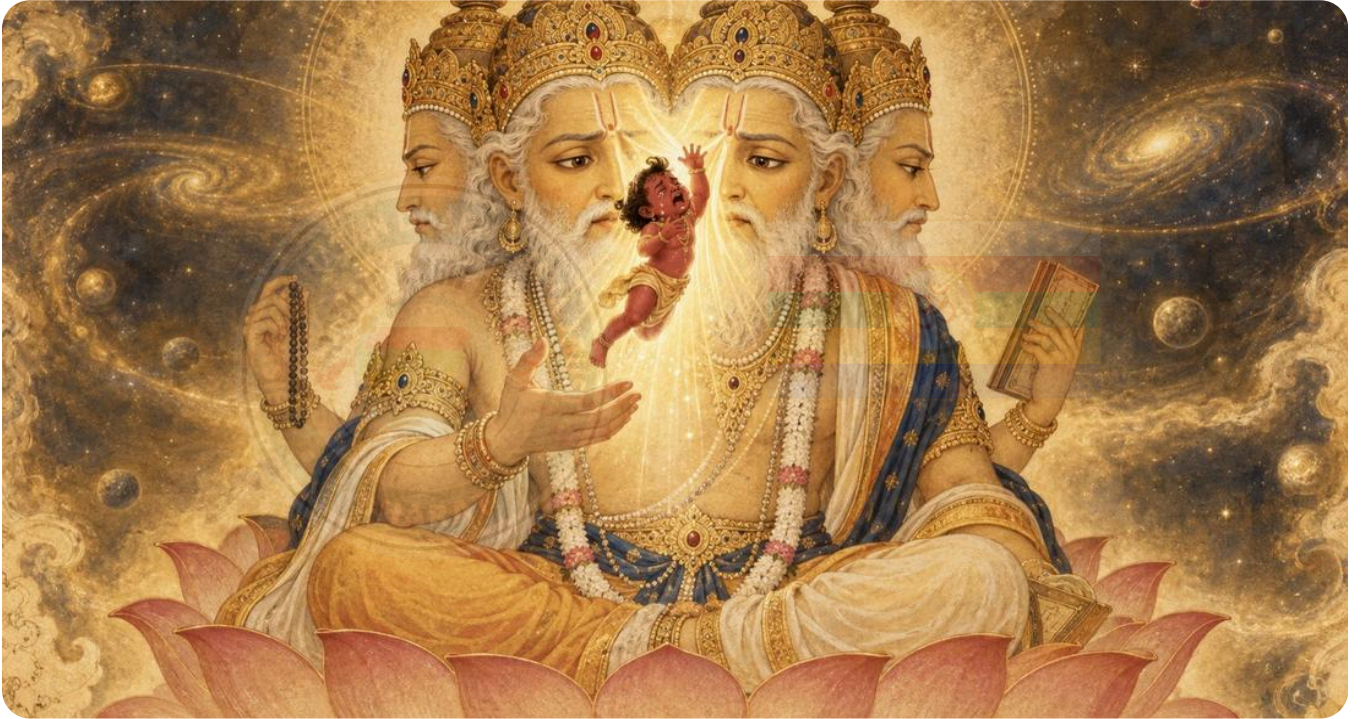
13 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



असंतुष्ट सृष्टिकर्ता की भौंहों के मध्य से, गहरे लाल वर्ण का एक बालक अकस्मात् प्रकट होता है, नाम तथा स्थान की याचना करते हुए रोता है — यह ब्रह्मा के दबे हुए क्रोध का साकार रूप है, तथा उस देवता के प्रथम अश्रु हैं जो आगे चलकर रुद्र कहलाएँगे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में परमात्मा की काल-स्वरूप महिमा का वर्णन करने के पश्चात्, महर्षि मैत्रेय अब उस विषय की ओर मुड़ते हैं जिसकी प्रतीक्षा विदुर इस प्रवचन के आरम्भ से ही कर रहे थे — यह जानने के लिए कि वेदगर्भ ब्रह्मा ने वास्तव में सृष्टि को किस प्रकार गति दी। यह कोई सुव्यवस्थित

अथवा विजयी कथा नहीं है। ब्रह्मा का प्रथम प्रयास केवल अज्ञान को जन्म देता है। उनके सर्वाधिक तेजस्वी पुत्र उनकी सहायता करने से इनकार कर देते हैं। उनका स्वयं का दबा हुआ क्रोध उनकी भाँहों से एक क्रन्दन करते बालक के रूप में फूट पड़ता है, जो आगे चलकर रुद्र कहलाता है। उनके शरीर के दस भिन्न-भिन्न अंगों से दस और पुत्र उत्पन्न होते हैं, और फिर भी सृष्टि का विस्तार नहीं होता — यहाँ तक कि, परम्परा जिसे अत्यन्त संवेदनशीलता से प्रस्तुत करती है, ब्रह्मा की अपनी ही इच्छा उन्हें लगभग पथभ्रष्ट कर देती है, और सृष्टि के दूसरे शरीर में पुनः आरम्भ करने से पूर्व उन्हें अपने ही पुत्रों से उपालम्भ सुनना पड़ता है। अध्याय 12 हमें दिखाता है कि सृष्टि किसी एक दिव्य आदेश-मात्र से नहीं, अपितु एक दीर्घ, कठिन, अत्यन्त व्यक्तिगत परिश्रम से सम्पन्न होती है — जो अन्ततः स्वायम्भुव मनु तथा उनकी रानी शतरूपा के माध्यम से ही सफल हो पाती है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 12 (द्वादश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: सृष्टि का विस्तार
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपना प्रवचन जारी रखते हुए (सम्पूर्ण कथा, बाह्यतम स्तर पर, सूत गोस्वामी द्वारा महर्षि शौनक तथा नैमिषारण्य की सभा को सुनाई जा रही है)
- मुख्य श्रोता: विदुर, जो इस अध्याय में एक बार स्वयं भी बोलते हैं (श्लोक 36) तथा मैत्रेय से अधिक विस्तार की याचना करते हैं
- मुख्य स्थल: गंगा तट, जहाँ मैत्रेय तथा विदुर पूर्ववत् आसीन हैं; कथा के भीतर, सम्पूर्ण नवसृजित ब्रह्माण्ड जिसे ब्रह्मा जनसंख्या से भरने का प्रयास कर रहे हैं
- मुख्य विषय: ब्रह्मा द्वारा अनजाने में पञ्चविध अज्ञान की सृष्टि; चार कुमारों का जन्म तथा सन्तानोत्पत्ति से इनकार; ब्रह्मा के क्रोध से रुद्र का जन्म; रुद्र की भयंकर सन्तानें तथा उनका तपस्या हेतु वन-गमन; ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न दस पुत्र जो सृष्टि को आगे बढ़ाते हैं; अपनी पुत्री वाक् के प्रति ब्रह्मा की लज्जा तथा कोहरे के रूप में शरीर-त्याग; ब्रह्मा के चार मुखों से वेदों, विद्याओं तथा पावन व्यवस्था का प्राकट्य; तथा स्वायम्भुव मनु और शतरूपा के माध्यम से उन पाँच सन्तानों का जन्म जिनकी वंशपरम्परा ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को भर दिया
- मुख्य श्लोक-संख्या: स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 1–56 (गीता प्रेस के अंग्रेज़ी अनुवाद में श्लोक 49–52 एक सतत अनुच्छेद के रूप में प्रस्तुत)
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

काल से सृष्टि-कार्य की ओर

मैत्रेय इस अध्याय का आरम्भ पिछले अध्याय को समाप्त करते हुए करते हैं। वे विदुर से मानो कहते हैं: मैंने अब तुम्हें काल के नाम से विख्यात परमात्मा की महिमा का वर्णन कर दिया है; अब मुझसे सुनो कि वेदगर्भ ब्रह्मा ने सृष्टि के वास्तविक कार्य को किस प्रकार आगे बढ़ाया।

मैत्रेय उवाच

इति ते वर्णितः क्षत्तः कालाख्यः परमात्मनः ।

महिमा वेदगर्भोऽथ यथासाक्षीन्निबोध मे ॥ १ ॥

maitreya uvāca iti te varṇitaḥ kṣattaḥ kālākhyāḥ paramātmānaḥ mahimā veda-garbho 'thayathāsrākṣīn nibodha me

भावार्थ: मैत्रेय ने विदुर से कहा कि काल-रूप परमात्मा की महिमा का उनका वर्णन अब पूर्ण हो चुका है, तथा वे आगे यह बताएँगे कि वेदों के आगार ब्रह्मा ने सृष्टि के वास्तविक कार्य को किस प्रकार सम्पन्न किया। (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 1)

यह एक संक्षिप्त, सीधा-सा श्लोक है, किन्तु यह प्रवचन में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ का संकेत देता है। अब तक जो कुछ भी कहा गया — काल-स्वरूप परमात्मा का दर्शन, उनकी महिमा पर चिन्तन — वह सब प्रारम्भिक तैयारी मात्र था। अब मैत्रेय सृष्टि के निर्माण की वास्तविक प्रक्रिया की ओर बढ़ते हैं, और जो कथा वे सुनाते हैं वह किसी सरल दैवी आदेश से कहीं अधिक विचित्र तथा मानवीय है।

ब्रह्मा की प्रथम, अवांछित सृष्टि

अपनी इच्छित किसी भी वस्तु की रचना करने से पूर्व, ब्रह्मा एक ऐसी वस्तु उत्पन्न कर देते हैं जिसकी उन्हें इच्छा नहीं थी — पञ्चविध अज्ञान। तमस, अपने वास्तविक स्वरूप का अज्ञान; मोह, शरीर के साथ मिथ्या तादात्म्य; महामोह, इन्द्रिय-सुख की अनवरत लालसा; तामिस्र, क्रोध; तथा अन्धतामिस्र, मृत्यु को ही अपना अन्तिम अन्त मान लेने का भ्रम — यही ब्रह्मा की प्रथम “सृष्टि” है, और वे अपनी इस रचना से स्वयं ही असन्तुष्ट रहते हैं। इस अत्यन्त अशुभ आरम्भ से खिन्न होकर, ब्रह्मा भगवान् के ध्यान की ओर मुड़ते हैं, अपने मन को शुद्ध करते हैं, और तभी एक सर्वथा भिन्न सृष्टि को जन्म देते हैं — चार ऋषि सनक, सनन्दन, सनातन तथा सनत्कुमार, जो आजीवन ब्रह्मचारी हैं, ऐसे “ऊर्ध्वरेता” कि उन्होंने अपनी इन्द्रियों पर इतना पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है कि परम्परा के अनुसार उनके जीवन की सामान्य धारा भी नीचे की ओर नहीं, अपितु ऊर्ध्व की ओर प्रवाहित होती है।



अनजाने में उत्पन्न पञ्चविध अज्ञान से अपना मन हटाते हुए, भगवान् के ध्यान से शुद्ध हुए ब्रह्मा चार ऋषि-बालकों — सनक, सनन्दन, सनातन तथा सनत्कुमार — को जन्म देते हैं, जो आजीवन वैराग्य हेतु नियत हैं (श्लोक 2-4)।

ब्रह्मा इन असाधारण पुत्रों से वही याचना करते हैं जो कोई भी पिता अपनी सन्तान से करेगा: विवाह करो, सन्तान उत्पन्न करो, वंश को आगे बढ़ाओ। वे इनकार कर देते हैं। शास्त्र कहता है कि उनका हृदय पहले से ही भगवान् वासुदेव पर परम लक्ष्य के रूप में केन्द्रित है, और उन्होंने मुक्ति के मार्ग के रूप में वैराग्य का व्रत पहले ही ले लिया है। यह विद्रोह नहीं, अपितु एक सर्वथा भिन्न बुलाहट है — किन्तु ब्रह्मा के लिए, जो सृष्टि के ठीक आरम्भ में लगभग रिक्त हस्त खड़े हैं, यह एक गम्भीर संकट है। उनके अपने ही प्रथम सफल पुत्र, जो पवित्रता तथा ज्ञान के साक्षात् स्वरूप हैं, उस कार्य में कोई भाग नहीं लेना चाहते जिसे वे सम्पन्न कराना चाहते हैं।

ब्रह्मा के क्रोध से रुद्र का जन्म

अपने ही पुत्रों द्वारा तिरस्कृत होकर, ब्रह्मा अपने भीतर उठते क्रोध को वश में करने का प्रयास करते हैं। वे असफल रहते हैं। युक्ति के बल से उसे रोकने के हर प्रयास के बावजूद, वह दबा हुआ क्रोध उनकी दोनों भौंहों के मध्य से फूट पड़ता है — और जो प्रकट होता है वह कोई अमूर्त भाव नहीं, अपितु एक सजीव प्राणी है: गहरे लाल वर्ण का एक रोता हुआ बालक।

स वै रुरोद देवानां पूर्वजो भगवान् भवः ।

नामानि कुरु मे धातः स्थानानि च जगद्गुरो ॥ ८ ॥

sa vai ruroda devānām pūrvajō bhagavān bhavaḥ nāmāni kuru me dhātaḥ sthānāni ca jagad-guro

भावार्थ: वह बालक — जो देवताओं में सबसे पहले जन्मे पूज्य भगवान् भव के अतिरिक्त और कोई नहीं था — रो पड़ा, “हे सृष्टिकर्ता, मुझे नाम दीजिए, तथा हे जगद्गुरु, मुझे निवास-स्थान भी प्रदान कीजिए।” (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 8)

यही रुद्र हैं, और यह दृश्य इस बात के लिए उल्लेखनीय है कि यह कितना कोमल तथा घरेलू-सा प्रतीत होता है। एक नवजात देवता, किसी भी साधारण शिशु की भाँति भयभीत तथा रुदन करता हुआ, केवल अपने पिता से अपनी पहचान माँगता है — एक नाम, संसार में रहने के लिए एक स्थान। ब्रह्मा कोमल स्वर में उत्तर देते हैं, बालक को रोने से मना करते हैं, तथा तुरन्त उसकी व्यवस्था करने का आश्वासन देते हैं।



अपने पुत्रों के इनकार से उत्पन्न क्रोध को वश में न कर पाने के कारण, ब्रह्मा का दबा हुआ क्रोध उनकी भाँहों के मध्य से गहरे लाल वर्ण के रुदन करते बालक के रूप में फूट पड़ता है — नवजात रुद्र, जो अपने पिता से केवल एक नाम तथा संसार में स्थान माँगते हैं (श्लोक 6-8)।

चूँकि वह बालक भयभीत शिशु की भाँति रोया था, अतः ब्रह्मा उससे कहते हैं कि लोग उसे सदैव रुद्र — अर्थात् “रोने वाला” — नाम से पुकारेंगे।

यदरोदीः सुरश्रेष्ठ सोद्वेग इव बालकः ।

ततस्त्वामभिधास्यन्ति नाम्ना रुद्र इति प्रजाः ॥ १० ॥

yad arodīḥ sura-śreṣṭha sodvega iva bālakaḥ tatas tvām abhidhāsyanti nāmnā rudra iti prajāḥ

भावार्थः हे देवताओं में श्रेष्ठ, चूँकि तुम भयभीत बालक की भाँति चिल्ला उठे थे, इसलिए अब से लोग तुम्हें रुद्र नाम से पुकारेंगे। (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 10)

ब्रह्मा केवल एक ही नाम पर नहीं रुकते। वे रुद्र को अनेक अन्य नाम भी प्रदान करते हैं — मन्यु, मनु, महिनास, महान्, शिव, ऋतध्वज, उग्ररेता, भव, काल, वामदेव, धृतव्रत — प्रत्येक एक विशिष्ट निवास-स्थान से सम्बद्धः हृदय, इन्द्रियाँ, प्राणवायु, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा, तथा तपस्या स्वयं। और वे रुद्र को ग्यारह पत्नियाँ भी प्रदान करते हैं, रुद्राणियाँ — धी, वृत्ति, उषणा, उमा, नियुत्, सर्पि, इला, अम्बिका, इरावती, सुधा तथा दीक्षा — तथा उन्हें आदेश देते हैं कि वे इन नामों, निवासों तथा पत्नियों को स्वीकार करें, और इनके माध्यम से सन्तानोत्पत्ति करें, क्योंकि अब वे भी एक प्रजापति हैं, जिन्हें सृष्टि-कार्य का दायित्व सौंपा गया है।

रुद्र के भयंकर गण

रुद्र आज्ञा का पालन करते हैं, और इसका परिणाम उनके अपने पिता को भयभीत कर देता है। रुद्र से उत्पन्न सन्तानें बल, रूप तथा स्वभाव में उन्हीं के समान होती हैं — और वे असंख्य, भयानक रुद्र-गणों के रूप में इतनी अधिक बढ़ जाती हैं कि वे स्वयं ब्रह्मा सहित चारों दिशाओं में अभी तक दुर्बल सृष्टि को निगल जाने की धमकी देने लगती हैं।



रुद्र की सन्तानें असंख्य समूहों में बढ़ जाती हैं, जो बल तथा उग्र स्वभाव में अपने पिता के समान हैं, उनकी जलती हुई आँखें चारों दिशाओं को भयभीत करती हैं — यह भयावह दृश्य ब्रह्मा को रुद्र से ऐसी सन्तानोत्पत्ति रोकने तथा तपस्या की ओर मुड़ने की याचना करने के लिए प्रेरित करता है (श्लोक 15-17)।

भयभीत होकर, ब्रह्मा रुद्र से ऐसी और सन्तान उत्पन्न न करने की प्रार्थना करते हैं। इसके स्थान पर, वे उनसे कठोर तपस्या करने का अनुरोध करते हैं — वह एकमात्र साधन, ब्रह्मा कहते हैं, जिससे समस्त प्राणियों का सच्चा कल्याण होता है तथा यह ब्रह्माण्ड प्रलय-पूर्व की भाँति पुनः सुव्यवस्थित हो सकता है।

तपसैव परं ज्योतिर्भगवन्तमधोक्षजम् ।

सर्वभूतगुहावासमज्जसा विन्दते पुमान् ॥ १९ ॥

tapasaiva param jyotir bhagavantam adhokṣajam sarva-bhūta-guhāvāsam añjasā vindate pumān

भावार्थ: तपस्या से ही, अन्य किसी उपाय से नहीं, मनुष्य सीधे उस परम ज्योति को प्राप्त करता है — वह भगवान् जो प्रत्येक प्राणी के हृदय-गुहा में छिपे रहते हैं, तथा जो इन्द्रियों की पकड़ से सर्वथा परे हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 19)

रुद्र का उत्तर तत्काल तथा सरल है: “ठीक है।” वे आदर-सूचक परिक्रमा करके अपने पिता से विदा लेते हैं और तपस्या करने के लिए वन की ओर प्रस्थान करते हैं। यह एक उल्लेखनीय क्षण है — जो देवता आगे चलकर परम्परा के महानतम देवताओं में से एक बनने वाले हैं, वे अपने मार्ग का आरम्भ किसी विशाल दैवी सत्ता से नहीं, अपितु शान्त आज्ञाकारिता तथा आत्म-संयम के एक कार्य से करते हैं, अनियन्त्रित

सन्तानोत्पत्ति के स्थान पर तप को चुनते हुए।

दस पुत्र, तथा ब्रह्मा के अपने शरीर से सृष्टि की निरन्तरता

रुद्र की वंश-परम्परा को नियन्त्रित करने के पश्चात्, ब्रह्मा पुनः प्रयास करते हैं। भगवान् की सृजनात्मक शक्ति से पुनः सम्पन्न होकर, वे सृष्टि को सम्यक् रूप से बढ़ाने के लिए समर्पित दस और पुत्रों को जन्म देते हैं: मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ तथा दक्ष — तथा नारद को दसवें पुत्र के रूप में।

मरीचिरत्र्याङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।

भृगुर्वसिष्ठो दक्षश्च दशमस्तत्र नारदः ॥ २२ ॥

marīcir atry-aṅgirasau pulastyaḥ pulahaḥ kratuḥ bhṛgur vasiṣṭho dakṣaś ca daśamas tatra nāradaḥ

भावार्थ: मरीचि, अत्रि तथा अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह तथा क्रतु, भृगु तथा वसिष्ठ तथा दक्ष — और इनमें दसवें नारद हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 22)

इन दस पुत्रों के विषय में जो बात उल्लेखनीय है वह यह है कि वे कहाँ से उत्पन्न हुए। प्रत्येक को ब्रह्मा के शरीर के एक भिन्न अंग से उत्पन्न बताया गया है: नारद उनकी गोद से, दक्ष उनके अंगूठे से, वसिष्ठ उनके श्वास से, भृगु उनकी त्वचा से, क्रतु उनके हाथ से, पुलह उनकी नाभि से, पुलस्त्य उनके कानों से, अंगिरा उनके मुख से, अत्रि उनके नेत्रों से, तथा मरीचि उनके मन से। यह क्रम इन दस से आगे भी चलता रहता है: धर्म — जिनसे स्वयं भगवान् नारायण नर तथा नारायण के युगल रूपों में अवतरित हुए — ब्रह्मा के दाहिने वक्षस्थल से प्रकट हुए; अधर्म — जिनसे भयंकर मृत्यु-देव उत्पन्न हुए — उनकी पीठ से प्रकट हुए; काम उनके हृदय से; क्रोध उनकी भौंहों से; लोभ उनके निचले होंठ से; वाणी की देवी वाक् उनके मुख से; समुद्र उनके जननेन्द्रिय से; तथा पाप के अधिष्ठाता निर्ऋति उनके गुदा से। यहाँ तक कि ऋषि कर्दम — जो आगे चलकर देवहूति के पति तथा भगवान् कपिल के पिता बने — उनकी छाया से उत्पन्न बताए गए हैं। मैत्रेय विदुर से कहते हैं कि सम्पूर्ण सृष्टि इस प्रकार या तो ब्रह्मा के मन से या उनके शरीर से विकसित हुई।



भगवान् की सृजनात्मक शक्ति से पुनः सम्पन्न होकर, ब्रह्मा दस पुत्रों — मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, दक्ष तथा नारद — को जन्म देते हैं, जिनमें से प्रत्येक उनके शरीर के भिन्न अंग से उत्पन्न होता है (श्लोक 21-24)।

ब्रह्मा की लज्जा, तथा कोहरे के रूप में शरीर-त्याग

अब अध्याय अपने सबसे कठिन अंशों में से एक की ओर मुड़ता है, जिसे परम्परा स्वयं टाले बिना सावधानीपूर्वक प्रस्तुत करती है। सृष्टि को और आगे बढ़ाने के उत्साह में, ब्रह्मा अपनी ही पुत्री वाक् के प्रति आसक्त हो जाते हैं, जिन्हें अत्यन्त सुन्दर तथा मनोहर बताया गया है — यद्यपि उनके मन में स्वयं ऐसी कोई इच्छा नहीं थी। उनके पुत्र, मरीचि तथा अन्य ऋषि, अपने पिता की यह दशा देखकर, निन्दा के भाव से नहीं अपितु पुत्रोचित स्नेह से उनसे सीधे बात करते हैं: यह अत्यन्त विचित्र है, वे कहते हैं, कि जो स्वयं का स्वामी है वह अपनी ही पुत्री के प्रति अपनी वासना पर नियन्त्रण नहीं रख पा रहा; ऐसा कार्य न तो उनसे पहले किसी ब्रह्मा ने किया, न ही उनके पश्चात् आने वाला कोई ब्रह्मा करेगा; यह इतने शक्तिशाली व्यक्ति के लिए भी प्रशंसनीय नहीं है, क्योंकि विवेकवानों के आचरण का अनुसरण करके ही संसार सुख का मार्ग पाता है। वे अपनी याचना को उस भगवान् को नमस्कार अर्पित करते हुए समाप्त करते हैं, जिन्होंने अपने ही ज्ञान-प्रकाश से इस ब्रह्माण्ड को प्रकट किया, प्रार्थना करते हुए कि वे धर्म की रक्षा करें।

तस्मै नमो भगवते य इदं स्वेन रोचिषा ।

आत्मस्थं व्यञ्जयामास स धर्मं पातुमर्हति ॥ ३२ ॥

tasmai namo bhagavate ya idam svena rociṣā ātma-sthaṁ vyañjayām āsa sa dharmam pātum arhati

भावार्थ: हम उन भगवान् को नमस्कार करते हैं जिन्होंने स्वयं में स्थित रहते हुए अपने ही तेज से इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को प्रकट किया है — वे कृपापूर्वक धर्म की रक्षा करें। (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 32)



मरीचि तथा अन्य ऋषि-पुत्र, अपने पिता ब्रह्मा का हृदय अपनी ही पुत्री वाक् के प्रति अधर्म में लगा देखकर, पुत्रोचित स्नेह से उनसे उपालम्भ करते हैं (श्लोक 28-32)।

ब्रह्मा की प्रतिक्रिया तत्काल तथा सम्पूर्ण होती है। अपने ही पुत्रों — जिन्हें उन्होंने स्वयं जन्म दिया था, प्रजापतियों — को अपने समक्ष इस प्रकार याचना करते देखकर लज्जित होकर, वे तुरन्त उस शरीर का त्याग कर देते हैं। चारों दिशाएँ उसे उठा लेती हैं, और वह संसार में कोहरे, जिसे अन्धकार भी कहा जाता है, के रूप में विद्यमान रहता है। यह देखना सार्थक है कि श्रीमद्भागवत इस प्रसंग को किस प्रकार प्रस्तुत करता है: ब्रह्मा को उचित ठहराने अथवा दोषारोपण में उलझने के स्थान पर, ग्रन्थ शीघ्रता से परिणाम तथा सुधार की ओर बढ़ जाता है — लज्जा, आपत्तिजनक शरीर का त्याग, तथा एक नया आरम्भ। इस प्रसंग पर पारम्परिक टिप्पणी में यह स्पष्ट किया गया है कि इसका उद्देश्य ब्रह्मा की जीवनी का शाब्दिक वर्णन करना नहीं, अपितु एक स्पष्ट चेतावनी देना है: कि ब्रह्मा जैसे अनुशासित मन को भी उचित परिस्थितियों के अभाव में वासना अभिभूत कर सकती है, तथा शास्त्र अन्यत्र भी यह उपदेश देता है कि मनुष्य को अपनी माता, बहन अथवा पुत्री के साथ भी कभी पूर्णतः एकान्त में नहीं रहना चाहिए — क्योंकि इन्द्रियाँ इतनी शक्तिशाली हैं कि वे विद्वान् पुरुष को भी भ्रमित कर सकती हैं।

इस प्रसंग से एक और गहरी बात समझनी चाहिए, जिसे केवल एक भूल-कथा मानकर पढ़ने पर छूट सकती है। ध्यान दें कि मरीचि तथा उनके भाई वास्तव में क्या माँगते हैं — ब्रह्मा के लिए दण्ड नहीं, अपितु उस भगवान् से धर्म की रक्षा, यह विश्वास करते हुए कि ब्रह्मा के भीतर विराजमान वही परमात्मा उन्हें पुनः सही मार्ग पर ले आएँगे (श्लोक 32)। और यह सुधार तत्काल होता है — जिस क्षण ब्रह्मा आत्म-समर्थन के स्थान पर लज्जा की ओर मुड़ते हैं, वह दूषित शरीर तुरन्त लुप्त हो जाता है, तथा कुछ ही क्षणों में स्वयं वेद उनसे पूर्ण रूप से प्रवाहित होने लगते हैं (श्लोक 33-34)। यहाँ जो शिक्षा ग्रहण करनी है वह यह नहीं कि ब्रह्मा किसी साधारण मनुष्य की भाँति पतित हुए, अपितु यह कि भगवान् के प्रति समर्पित आत्मा को उस एक क्षणिक प्रलोभन से नहीं, अपितु इस बात से आँका जाता है कि वह उसे पकड़े रहने के स्थान पर कितनी शीघ्रता से त्याग देती है। यही त्याग की तत्परता — पूर्णता नहीं — भगवान् की कृपा का उत्तर है।

ब्रह्मा के मुखों से वेदों तथा पावन व्यवस्था का प्राकट्य

उस शरीर को त्यागने के पश्चात्, ब्रह्मा पुनः इस विषय पर ध्यान केन्द्रित करते हैं कि सृष्टि एक सुसंगत, समग्र रूप में किस प्रकार आगे बढ़ सकती है। इस बार परिणाम असाधारण होते हैं। उनके चार मुखों से — पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर की ओर मुख किए हुए — चार वेद प्रकट होते हैं: ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद, साथ ही यज्ञ में कार्यरत चार पुरोहितों के तदनुरूप कर्तव्य भी। इन्हीं चार मुखों से आयुर्वेद (चिकित्सा-

विज्ञान), धनुर्वेद (धनुर्विद्या), गान्धर्ववेद (संगीत-विद्या) तथा स्थापत्यवेद (स्थापत्य-विद्या) उत्पन्न होते हैं, तथा इतिहास एवं पुराण नामक विशाल साहित्य, जिसे पञ्चम वेद के रूप में मान्यता प्राप्त है। यज्ञों के युगल, चार धर्म-स्तम्भ (ज्ञान से प्राप्त पवित्रता, दान, तप तथा सत्य), जीवन की चार अवस्थाएँ (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास) तथा प्रत्येक अवस्था के विशिष्ट कर्तव्य, व्रत तथा जीविका के साधन, सभी ब्रह्मा के मुखों से क्रमबद्ध रूप से प्रकट होते हैं।

विदुर, यह सब सुनकर, मैत्रेय से सीधा प्रश्न पूछते हैं: मुझे विस्तार से बताइए कि ब्रह्मा ने किस मुख अथवा अन्य अंग से क्या उत्पन्न किया? मैत्रेय एक-एक कर उत्तर देना आरम्भ करते हैं, ज्ञान की शाखाओं से:

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्तथैव च ।

एवं व्याहृत्यश्वासन् प्रणवो ह्यस्य दहतः ॥ ४४ ॥

ānvīkṣikī trayī vārtā daṇḍa-nītis tathaiva ca evaṁ vyāhṛtayaś cāsan praṇavo hy asya dahrataḥ

भावार्थ: ज्ञान की चार शाखाएँ — आन्वीक्षिकी (आत्म-ज्ञान), त्रयी (कर्मकाण्ड का ज्ञान), वार्ता (कृषि-वाणिज्य का ज्ञान), तथा दण्डनीति (राजनीति-शास्त्र) — तथा पावन व्याहृतियाँ, इसी क्रम में ब्रह्मा के मुखों से प्रकट हुईं, जबकि प्रणव, ॐ अक्षर, स्वयं उनके हृदय की गुहा से प्रवाहित हुआ। (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 44)



अपने चार मुखों से ब्रह्मा चार वेदों, विद्याओं, पौरोहित्य-कर्तव्यों तथा जीवन की पावन व्यवस्था को प्रकट करते हैं, जबकि ॐ अक्षर उनके हृदय की गुहा से प्रवाहित होता है (श्लोक 34-44)।

मैत्रेय का उत्तर और भी सूक्ष्म विवरण में जारी रहता है: वेद-छन्द भी ब्रह्मा के शरीर से ही उत्पन्न बताए जाते हैं — उष्णिक उनके रोमों से, गायत्री उनकी त्वचा से, त्रिष्टुभ् उनके मांस से, अनुष्टुभ् उनकी नसों से, जगती उनकी हड्डियों से, पंक्ति उनकी मज्जा से, तथा बृहती उनकी श्वास से। उनकी चेतना कठोर व्यंजन बनी; उनका शरीर ही स्वर बना; उनकी इन्द्रियाँ ऊष्म-वर्ण (सिबिलैंट) बनीं; उनका बल अन्तःस्थ (अर्ध-स्वर) बना;

तथा सप्त संगीत-स्वर उनकी अपनी पुनःसृजनात्मक शक्ति से उत्पन्न हुए। ब्रह्मा को शब्दब्रह्म — अर्थात् साक्षात् वेद अथवा पावन ध्वनि — बताया गया है, जो बाह्य रूप से वैखरी (उच्चारित वाणी) के रूप में प्रकट तथा आन्तरिक रूप से प्रणव के रूप में अप्रकट हैं; तथा ब्रह्मा से भी परे वह परमात्मा विराजमान है, जो सर्वव्यापी है तथा सर्वशक्तिमान् प्रभु के रूप में समस्त शक्तियों से युक्त है।

एक द्वितीय शरीर, तथा मनु और शतरूपा का जन्म

अपने पूर्व दूषित शरीर का त्याग करने के पश्चात्, ब्रह्मा एक नया शरीर धारण करते हैं तथा पुनः सृष्टि की ओर अपना हृदय लगाते हैं। किन्तु अब भी, मरीचि तथा अन्य समान रूप से शक्तिशाली ऋषियों के कार्यरत होने पर भी, सृष्टि उस रूप में विस्तार नहीं पा रही जैसा उसे होना चाहिए। ब्रह्मा अपने ही हृदय में विचार करने लगते हैं कि इतने निरन्तर प्रयास के बावजूद उनकी सन्तान क्यों नहीं बढ़ रही — मानो कोई प्रतिकूल भाग्य उनके मार्ग में बाधा बन रहा हो। जब वे किसी अधिक अनुकूल समय की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं, तब एक अद्भुत घटना घटती है: ब्रह्मा का अपना शरीर दो भागों में विभाजित हो जाता है। इसी विभाजन से, हमें बताया जाता है, संस्कृत शब्द “काय” — अर्थात् मानव-शरीर — की उत्पत्ति हुई, क्योंकि यह मूलतः ब्रह्मा का ही शरीर था। इन दो परिणामी रूपों में से एक पुरुष तथा दूसरा स्त्री है।

पुरुष-रूप स्वायम्भुव मनु बनता है, जो सम्पूर्ण पृथ्वी के प्रथम सम्राट् हैं; स्त्री-रूप उनकी रानी शतरूपा बनती है। उनके मिलन से, अन्ततः, सृष्टि उसी प्रकार विस्तार पाने लगती है जिसकी ब्रह्मा प्रतीक्षा कर रहे थे। स्वायम्भुव मनु तथा शतरूपा पाँच सन्तानों को जन्म देते हैं: दो पुत्र, प्रियव्रत तथा उत्तानपाद, तथा तीन पुत्रियाँ, आकूति, देवहूति तथा प्रसूति।

स चापि शतरूपायां पञ्चापत्यान्यजीजनत् ।

प्रियव्रतोत्तानपादौ तिस्रः कन्याश्च भारत ।

आकूतिर्देवहूतिश्च प्रसूतिरिति सत्तम ॥ ५६ ॥

sa cāpi śatarūpāyāṁ pañcāpatyāny ajījanat priyavratottānapādaṁ tisraḥ kanyāś ca bhārata ākūtir devahūtiś ca prasūtir iti sattama

भावार्थः शतरूपा के माध्यम से, स्वायम्भुव मनु ने पाँच सन्तानों को जन्म दिया: पुत्र प्रियव्रत तथा उत्तानपाद, तथा तीन पुत्रियाँ — हे भरतश्रेष्ठ — जिनके नाम आकूति, देवहूति तथा प्रसूति थे। (स्कन्ध 3, अध्याय 12, श्लोक 56)



ब्रह्मा का अपना शरीर पुरुष तथा स्त्री रूपों में विभाजित होता है — स्वायम्भुव मनु तथा उनकी रानी शतरूपा — जिनकी पाँच सन्तानें सृष्टि के स्थिर विस्तार का वास्तविक आरम्भ बनती हैं (श्लोक 49-56)।

मनु अपनी सबसे बड़ी पुत्री, आकूति, प्रजापति रुचि को; मंझली पुत्री, देवहूति, महर्षि कर्दम को (जो, स्मरण रहे, इसी अध्याय में पहले ब्रह्मा की छाया से उत्पन्न बताए गए थे, तथा जो आगे भगवान् कपिल के पिता बने) को; तथा सबसे छोटी पुत्री, प्रसूति, दक्ष को (जो इसी अध्याय में पूर्व वर्णित ब्रह्मा के दस पुत्रों में से एक हैं) प्रदान करते हैं। मैत्रेय एक सरल किन्तु भारी कथन के साथ इस प्रसंग को समाप्त करते हैं: इन तीन पुत्रियों की वंश-परम्परा ने अकेले ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को भर दिया। अनेक असफल प्रयासों, अस्वीकृत याचनाओं, अनियन्त्रित क्रोध तथा एक लज्जाजनक भूल को सुधारने के पश्चात्, सृष्टि को अन्ततः अपना आधार मिल जाता है — किसी एक नाटकीय कार्य से नहीं, अपितु एक परिवार के शान्त, साधारण विस्तार से।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. दैवी प्रयास भी सफल होने से पूर्व विफल हो सकता है। ब्रह्मा का प्रथम कार्य पञ्चविध अज्ञान को जन्म देता है, न कि वह संसार जिसकी उन्हें अभीष्ट थी — यह स्मरण कराता है कि सृजन की उच्चतम क्षमता भी तत्काल, त्रुटिरहित परिणाम की गारंटी नहीं देती (श्लोक 2)।
2. कुछ लोग सन्तानोत्पत्ति के लिए नहीं, अपितु वैराग्य के लिए बुलाए जाते हैं। चार कुमारों का सन्तानोत्पत्ति से इनकार अवज्ञा नहीं, अपितु एक भिन्न, उच्चतर बुलाहट का सम्मान है; हर वरदान हर प्रयोजन की पूर्ति के लिए नहीं होता (श्लोक 5)।
3. दबा हुआ क्रोध लुप्त नहीं होता — वह अपना स्वयं का जीवन धारण कर लेता है। रुद्र का जन्म ठीक इसीलिए होता है क्योंकि ब्रह्मा अपने ही क्रोध को वश में करने का प्रयास करते हुए असफल हो जाते हैं; जिसे इच्छाशक्ति से रोका जाता है, वह भी संसार में अपना मार्ग खोज ही लेता है (श्लोक 6-8)।
4. सच्चा बल आज्ञाकारिता तथा संयम भी चुन सकता है। रुद्र, जो अपने ही पिता को भयभीत कर देने योग्य गण उत्पन्न करने में सक्षम हैं, आदेश मिलते ही केवल “ठीक है” कहकर तपस्या हेतु प्रस्थान कर देते हैं — बल, स्वेच्छा से, एक उच्चतर उद्देश्य के समक्ष समर्पित हो जाता है (श्लोक 20)।

5. कोई भी, चाहे कितना ही अनुशासित क्यों न हो, प्रलोभन से परे नहीं है। ब्रह्मा की अपनी पुत्री के प्रति भूल को खुलेआम प्रस्तुत किया गया है, सृष्टिकर्ता की निन्दा के लिए नहीं, अपितु इस चेतावनी के लिए कि उचित परिस्थितियों के अभाव में इन्द्रियाँ आत्म-संयमी को भी अभिभूत कर सकती हैं (श्लोक 28-30)।

6. ईमानदारी से किया गया सुधार ही नए आरम्भ का मार्ग खोलता है। आत्म-रक्षा करने के स्थान पर, ब्रह्मा लज्जित होकर दूषित शरीर का त्याग करते हैं तथा पुनः आरम्भ करते हैं — यह दर्शाते हुए कि किसी दोष को साथ लेकर चलने के स्थान पर उसे ईमानदारी से त्याग देना ही मार्ग का एक अंग है (श्लोक 33)।

7. सृष्टि का अन्तिम विस्तार एकाकी प्रयास से नहीं, सहभागिता से होता है। अन्य समस्त प्रयासों के पश्चात्, स्वायम्भुव मनु तथा शतरूपा का मिलन — पुरुष तथा स्त्री का सम्मिलित सहयोग — ही सृष्टि के स्थिर, स्थायी विस्तार का वास्तविक आरम्भ करता है (श्लोक 53-56)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में एक असाधारण ईमानदारी है जिसे पहली बार पढ़ते समय अनदेखा करना सरल है। हम सृष्टि की कथाओं को विजयी रूप में सोचने के अभ्यस्त हैं — एक दैवी वचन बोला जाता है, और संसार पूर्ण रूप में प्रकट हो जाता है। यह अध्याय हमें इससे कहीं अधिक परिचित कुछ प्रदान करता है: एक सृष्टिकर्ता जो शुभ से पूर्व अशुभ उत्पन्न करता है; जिसकी सर्वाधिक प्रतिभाशाली सन्तान उसकी सहायता करने से इनकार करती है; जिसका अपना दबा हुआ भाव स्वतन्त्र हो जाता है तथा एक ऐसा प्राणी बन जाता है जिसे उसे स्वयं नाम देना, आश्रय देना तथा मार्गदर्शन करना पड़ता है; और जो, सब कुछ के बावजूद, इतनी गम्भीर भूल कर बैठता है कि पुनः आरम्भ करने से पूर्व उसे अपने ही पुत्रों से सुधार की आवश्यकता होती है। और फिर भी इनमें से कुछ भी ब्रह्मा को छोटा नहीं करता। यदि कुछ भी है, तो यह सृष्टि के अन्तिम विकास को — रुद्र की आज्ञाकारी तपस्या के माध्यम से, ब्रह्मा के अपने ही शरीर से बीजों की भाँति बिखरे दस पुत्रों के माध्यम से, मनु तथा शतरूपा की शान्त, निष्ठापूर्ण सहभागिता के माध्यम से — अधिक कठिनाई से अर्जित तथा अधिक वास्तविक बना देता है। यहाँ जो शिक्षा दी गई है वह यह नहीं कि किसी भी सच्ची सृष्टि का मार्ग सरल होता है, अपितु यह कि वह भूलों तथा सुधारों, यहाँ तक कि लज्जा को भी, सहन कर सकता है, बशर्ते प्रत्येक को छिपाने के स्थान पर ईमानदारी से स्वीकार किया जाए।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, अपने ही जीवन में एक ऐसी वस्तु का स्मरण करें — कोई आदत, कोई सम्बन्ध, कोई कार्य — जहाँ आपका प्रथम प्रयास वैसा नहीं रहा जैसी आपने आशा की थी, अथवा जहाँ क्रोध अथवा इच्छा ने आपको किसी ऐसे मार्ग पर धकेल दिया जो आप नहीं चाहते थे। आत्म-निन्दा में उलझने के स्थान पर, इस अध्याय में ब्रह्मा के उदाहरण का अनुसरण करें: जो हुआ उसे ईमानदारी से स्वीकार करें, बिना बहाने के उसे त्याग दें, तथा एक नए, शुद्ध आरम्भ की ओर मुड़ें। ऐसा करने से पूर्व, कुछ क्षण शान्त बैठकर धीमे स्वर में दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” यह स्मरण आपको याद दिलाए कि स्वयं ब्रह्माण्ड के सृष्टिकर्ता को भी एक से अधिक प्रयास की आवश्यकता पड़ी थी — तथा यह कि किसी भी सच्चे कार्य को आगे बढ़ाने वाली वस्तु पूर्णता नहीं, अपितु ईमानदार सुधार है।

उपसंहार

तृतीय स्कन्ध का द्वादश अध्याय हमें उस सम्पूर्ण कठिन, मानवीय परिश्रम से परिचित कराता है जिसके द्वारा ब्रह्मा ने वास्तव में एक कार्यशील सृष्टि का निर्माण किया: अज्ञान की एक अवांछित प्रथम फसल; चार तेजस्वी पुत्र जिन्होंने सन्तानोत्पत्ति के स्थान पर वैराग्य को चुना; दबे हुए क्रोध से रुद्र का अकस्मात्, अश्रुपूर्ण जन्म, तथा उनकी भयंकर सन्तानों का तपस्या के पक्ष में विसर्जन; ब्रह्मा के अपने ही शरीर के दस भिन्न अंगों से उत्पन्न दस और पुत्र; अपनी पुत्री वाक् से सम्बन्धित एक पीड़ादायक भूल, जिसे उनके पुत्रों के ईमानदार उपालम्भ तथा उनकी अपनी तत्काल लज्जा से सुधारा गया; उनके मुखों तथा शरीर से प्रवाहित सम्पूर्ण पावन व्यवस्था — वेद, विद्याएँ, कर्तव्य, यहाँ तक कि संगीत-स्वर भी; तथा अन्ततः, स्वायम्भुव मनु तथा शतरूपा में विभाजित एक द्वितीय शरीर के माध्यम से, उन पाँच सन्तानों का जन्म जिनकी वंश-परम्परा ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को भर दिया। यह एक ऐसा अध्याय है जो सृष्टि को किसी एक पूर्ण कार्य के रूप में नहीं, अपितु एक दीर्घ, सुधारित, अन्ततः फलदायी प्रक्रिया के रूप में दर्शाता है — जो अन्ततः क्रोध से नहीं, इच्छा से नहीं, अपितु आज्ञाकारिता, ईमानदारी तथा सहभागिता से सफल होती है।

श्रीमद्भागवत की दिव्य ज्ञान-ज्योति हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), तृतीय स्कन्ध, द्वादश प्रवचन, पृष्ठ 183–188।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पंडित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र जी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके भावार्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक से सम्बद्धता अथवा समर्थन की कोई प्रतिध्वनि नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-3-adhyay-12-srishti-ka-vistaar.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट